मूल्य 1 रूपया

कृषक समाचार

भारत कृषक समाज का मासिक मुख पत्र

वर्ष 58 | नवम्बर, 2013 | अंक 11

सभापति का पत्र :

एक किसान अपने बच्चे से कहता है कि अच्छा पढ़ो और नौकरी करो नहीं तो मेरी तरह कष्ट भोगोगे।

यह केवल एक अभागे पिता की एकमात्र चेतावनी नहीं है, बल्कि विकासशील देशों के लगभग सभी किसानों की वास्तविकता है। माता–पिता नहीं चाहते कि उनके बच्चे खेती करें। पूरे विश्व की सरकारें वर्ष 2008 से बढ़ते हुए खाद्य मूल्यों के कारण शहरी लोगों के असंतोष को दबाने के लिए ही शोर मचाती हैं। किसानों को केवल सस्ता अनाज उगाने वाले ही माना जाता है। भारत में प्याज का आयात इसलिए किया जाता है कि शहरी मतदाता सत्ताधारी सरकार को बढ़ती हुए खाद्य मुद्रा स्फीति के कारण सत्ता से बेदखल न कर दें किंतु सरकार किसानों को उनके उत्पादन पर मिलने वाले कम मूल्य के प्रति चिंतित नहीं है।

विडंबना यह है कि अनाज उगाने वाला ही भूखा, निर्धन रहता है और कुपोषण का शिकार है। इसमें परिवर्तन करना कभी आसान नहीं रहा है। यह एक ऐसी उलझन है जो सभी को मिलकर दूर करनी होगी। किंतु ये प्रयास खेती के क्षेत्र में नहीं हो रहे हैं। हम कहां से शुरूआत कर सकते हैं ? हमें निर्णय लेने की प्रकिया में किसानों को शामिल करना चाहिए। पशुपालन, मछलीपालन और कुक्कुट पालन से छोटे किसान परिवारों की आय में जल्दी वृद्धि हो सकती है। इसके लिए हमें न्यूनतम जोखिम, मौसम की भविष्यवाणी, परिवहन बाजार तक पहुंच, कारगर नियम लागू करना, सड़क संपर्क, फसल के अंतराल को कम करने जैसे कुछ क्षेत्रों में कदम उठाने होंगे। निजी क्षेत्र के साथ भागीदारी करने की और सीमाओं के आर–पार व्यापार बढ़ाने की आवश्यकता है। इन्हें लागू करना बहुत महत्वपूर्ण है किंतु ऐतिहासिक अनुभव हमें अनुचित करारों के फंदे से सावधान रहने को भी कहता है।

विश्व में प्रमुख जिंसों के भाव अमीर देशों के किसानों को दी जाने वाली आर्थिक सहायता पर निर्भर हैं जिनसे जिन्स के भाव इतने गिर जाते हैं कि निर्धन देशों के किसान हानि उठाते हैं क्योंकि उनका उत्पादन सस्ता हो जाता है। इसके परिणामस्वरूप,

कृषि अनुसंधान और विकास में स्थानीय निवेश भी लाभकारी सिद्ध नहीं होता जिसकी सकारात्मक परिवर्तन करने में प्रमुख भूमिका है। उलझन और जटिल हो जाती है जिससे भारतीय अनुसंधान पद्धति के लिए गैर–सरकारी संस्थाओं द्वारा दिया जाने वाला पैसा कम होने लगता है जो एक विशेष योजना की वकालत करने, भ्रष्ट राजनीतिज्ञों और चापलूस सरकारी अधिकारियों के कारण होता है। आप अपनी सहायता के लिए क्या करेंगे ?

– अजय वीर जाखड़
अध्यक्ष, भारत कृषक समाज

O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O

'भारत में कृषि उत्पादों के मूल्य निर्धारण' के विषय पर आयोजित संगोष्ठी का सार।

मूल्य–नीति के स्थान पर आय नीति पर ध्यान केंद्रित करें।

डॉ० अशोक गुलाटी – अध्यक्ष, कृषि मूल्य एवं लागत आयोग

हम न्यूनतम समर्थन मूल्य नामक इस जादुई संदूक का क्या करें ? मूल्य कैसे नियत किए जाते हैं और इनका क्या प्रभाव पड़ सकता है। अर्थव्यवस्था में विभिन्न साझेदारों से एक बार वार्तालाप किया जाए तो आपको कई प्रतिक्रियाएं प्राप्त होंगी; चाहे कुछ भी मूल्य निर्धारित कर दिया जाए फिर भी किसान कहते हैं कि यह कम मूल्य है और अधिक मूल्य नियत करना चाहिए। जहां तक कि आज सुबह में भी आंध्र–प्रदेश के किसानों का एक प्रतिनिधिमंडल अधिक मूल्य नियत कराने के लिए बैठा हुआ था। साझेदारों (स्टेकहोल्डर) के रूप में उपभोक्ताओं का कहना है कि मूल्य पहले ही आसमान पर हैं और इन्हें नीचे लाना चाहिए। शायद वे सब कुछ निःशुल्क चाहते हैं। जिस संस्था को कृषि के मूल्य निर्धारति करने का कार्य सौंपा जाता है उसे यह आदेश मानना होता है। कृषि मूल्य एवं लागत आयोग का आदेश समान होता है कि उसे किसानों और उपभोक्ताओं दोनों के हितों का ध्यान रखना होता है। इसका कहना है कि उत्पादकता और उत्पादन को देश की आवश्यकता अनुसार बढ़ाने के लिए आधुनिक तकनीक अपनाने हेतु किसानों को आर्थिक सहायता दी जानी चाहिए।

अर्थव्यवस्था में मांग और आपूर्ति का संतुलन बनाने की भी आवश्यकता है। ऐसा करने पर नीति निर्माताओं को भूमि और जल संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग का ध्यान रखना होता है। न्यूनतम समर्थन मूल्य के अंतर्गत किसानों के उत्पादन की लागत, विभिन्न फसलों के बीच अंतःफसल समानता, कृषि और उद्योग के बीच व्यापारिक शर्तों का भी ध्यान रखा जाता है। ये मुख्य मुद्दे हैं जिन पर विचार किया जाता है। कोई भी व्यक्ति मांग–आपूर्ति पर प्रारंभ में ध्यान देता है और समग्र भावी योजनाओं के अंतर्गत इन सभी मुद्दों पर विचार करना होता है।

हम किसानों से विस्तार में वार्तालाप करते हैं और एक गलत धारणा पाते हैं कि न्यनूतम समर्थन मूल्य एक लागत और मूल्य का फार्मूला है। अपने आदेश के अनुसार कृषि मूल्य एवं लागत आयोग लागत और मूल्य का कारोबार नहीं है। यह टैरिफ कमिशन की तरह नहीं है जो लागत और मूल्य की गणना करता है। यह पहली बात है जिसे नोट किया जाना चाहिए। दूसरा, जब उत्पादन की लागत की गणना की जाती है – और यह एक अति महत्वपूर्ण घटक है – तो प्रत्येक किसान की लागत भिन्न आती है। यह राज्य से राज्य, फसल से फसल के आधार पर अलग होती है। उदाहरण के लिए यदि हम आज गेहूं का मूल्य निर्धारित करते हैं तो उत्पादन (सी–2) व्यापक लागत लगभग 850 रू. से 1600 रू. प्रति क्विंटल के बीच होगी। तो हम किसकी लागत की बात कर रहे हैं ? साठ, सत्तर और अस्सी के दशकों में विचार विमर्श किए जाते थे कि क्या हम ढेर आधारित (बल्क लाइन) लागत या तुली हुई (वेटिड) औसत लागत या अधिकतम कारगर पहलू की लागत लेते हैं। संस्था के समक्ष प्रथम चुनौती यह है कि किसकी लागत।

शब्दावली को समझने के लिए, ए–2 दी गई लागत है, जो किसान अपनी जेब से देता है, लेकिन खेती को पेड़ लागत के रूप में नहीं माना जा सकता। इसमें पारिवारिक मजदूर हैं जो कार्य करते हैं और भूमि का मूल्य भी शामिल है जिसका मालिक किसान होता है। अपनी भूमि की कैसे क़ीमत लगाएं यह एक बड़ मुद्दा है। मैंने अपने घर के लिए कुछ अर्थव्यवस्था के आधार पर जांच करनी चाही और पाया कि जिस मूल्य पर मैंने यह खरीदा था उसमें चार गुणा वृद्धि हो चुकी है। यदि मैं इसे बेचता हूँ तो मुझे इतनी राशि मिलेगी। यदि इसे बैंक में जमा कराता हूँ तो इतना मुझे हर महीने सरलता से मिल सकता है और इस कारण यह न्यूनतम राशि है जो मुझे इस पर किराए के रूप में मिलनी चाहिए। यह दार्शनिकता है। इस आधार पर मैं अपने घर में नहीं रह पाऊंगा। मैं उतना किराया नहीं दे सकता।

एक मुख्य विचारणीय पहलू है कि समय बढ़ने के साथ–साथ पूंजी में हुई वृद्धि की आशान्वित दर। इस प्रकार अपनी भूमि का मूल्य लगाना एक बड़ी चुनौती है। इन मुद्दों पर हमने विभिन्न प्रकार से ध्यान दिया है। वे लोग जो किराएदार हैं, वास्तविक किराया देते हैं, वह वास्तविक किराया लागत के एक भाग के रूप में गिना जाता है किंतु जो स्वयं मालिक हैं, संचालक हैं, तो उनके किराए की दर की गणना राज्य सरकारों के किराया विनियमों के अनुसार की जाती है जो उत्पादन के सकल मूल्य का लगभग 30 प्रतिशत बैठती है। अधिकतम राज्यों में इसकी रेंज 25 प्रतिशत से 30 प्रतिशत बैठती है। इस प्रकार भूमि के किराए मूल्य की गणना की जाती है।

अपनी पूंजी के संबंध में भी एक प्रश्न है। यदि आप उस पर ब्याज दे रहे हैं तो उसे कैसे पाओगे ? सामान्यतः लागत के 40 प्रतिशत से 50 प्रतिशत भाग का भुगतान नहीं किया जाता बल्कि वह थोपा जाता है। इस प्रकार दो धारणाएं हैं। पहली ए–2 है, जिसे हम दी गई लागत कहते हैं, जिसे किसान को अपनी जेब से देना होता है और दूसरी को सी–2 कहते हैं, यह व्यापक लागत होती है जिसमें अपनी भूमि का थोपा, अपनी पूंजी

का थोपा गया मूल्य और पारिवारिक मजदूरी का इंप्यूटिड मूल्य शामिल होता है। इन सभी की गणना की जाती है। इन दोनों धारणाओं में लगभग 50 प्रतिशत की भिन्नता होती है। हरियाणा में उत्पादन की लागत 900 रू. प्रति क्विंटल और महाराष्ट्र में 1600 रू. प्रति क्विंटल हो सकती है। इन सभी राज्यों के आंकड़े ले लिए जाते हैं और लागत की तुली हुई औसत निकाली जाती है। इस प्रकार जो राज्य अधिक उत्पादन करते हैं और जिनमें लागत कम होती है उन्हें अच्छा मूल्य मिल जाता है।

व्याख्या के अनुसार कुछ किसानों की वेटिड औसत पर अधिक लागत आती है और उनके लिए न्यनूतम समर्थन मूल्य हमेशा कम रहेगा और कम ही रहता रहेगा। यदि आप अंतिम किसान की लागत को शामिल करते हैं जो आज भाव यदि 100 प्रतिशत अधिक नहीं तो न्यनूतम 50 प्रतिशत अधिक होंगे और उस समय यह चुनौती होगी कि देश के उपभोक्ताओं का क्या होगा। मांग सदैव उपभोक्ताओं की होती है और उस मूल्य पर कृषि जिन्सें नहीं खरीद पाते और यदि आप खाद्य सुरक्षा बिल के अंतर्गत 2 रू. या 3 रू. प्रति किलो कुछ देना चाहते हैं तो आपको यह जानने की आवश्यकता होगी कि कितने लोगों को आप यह दे पाएंगे।

आज देश को खाद्य सुरक्षा के बारे में युद्ध आधार पर सोचने की आवश्यकता है और किसानों के लिए मूल्य नीति के स्थान पर आय नीति पर विचार विमर्श करने की आवश्यकता है और मैं पूर्ण रूप में सहमत हूँ कि कार्यरत लोगों को भी एक उचित आय के स्तर का अधिकार होना चाहिए। यदि आप यूरोप या अमेरिका में देखें तो उन्होंने मूल्य नीति के स्थान पर किसानों को आय नीति की सुविधा दी है और इसका कारण बिलकुल स्पष्ट है। यदि आप किसानों की आय बढ़ाने के लिए उन्हें अधिक से अधिक मूल्य देते हैं तो उनकी आय का उद्देश्य मूल्य नीति के रूप में बदल जाएगा तथा इससे बाजार में कई विकार उत्पन्न हो सकते हैं। ऐसा करने पर एक ही स्थान पर बड़ी मात्रा में माल इकटठा हो जाएगा जिससे बाजार समाप्त हो जाएगा और प्रत्येक वस्तु सरकार के पास आएगी तो ही आपको उस माल की बिक्री 2 रू. या 3 रू. पर करनी होगी और इससे भारी गड़बड़ हो जाएगी।

भारत या चीन में यह पहली बार नहीं हो रहा है। जैसे–जैसे अर्थव्यवस्था में सुधार होता है तो सरकार किसानों की सहायता का प्रयास करती है क्योंकि किसान ही आयवृद्धि के मामले में समाज के अन्य वर्गों से पीछे हैं। कृषि में कभी भी वृद्धि उतनी तेजी से नहीं हुई जितनी निर्माण या अन्य सेवाओं के क्षेत्र में। इस कारण लोग खेती छोड़ रहे हैं। पूरे विश्व में ही ऐसा हुआ है और भारत में भी ऐसा ही होगा चाहे हम उसे पसन्द करें या नहीं। भारत को इस परिवर्तन का सामना करना होगा, किन्तु मुख्य प्रश्न इसे अधिक आकर्षक और सुचारू बनाने का है। इसी क्षेत्र में नीति की कला सत्य नहीं बोलती।

जब प्रति व्यक्ति आय की दूरी में वृद्धि आरंभ हो जाती है तो इस असमानता को दूर करने के लिए आय संबंधी सहायक नीति का उपयोग करना होगा। इस नीति का

उपयोग ऐसे ढंग से करना चाहिए कि उससे बाजार में कम से कम विकार आएं नहीं तो बाजार में कई कमियां आ जाएंगी। आय सहायता में अंशों की समाप्ति के लिए मूल्य नीति कोई औजार नहीं है। यदि इसका उपयोग किया जाता है तो पूरे सिस्टम में गड़बड़ हो जाएगी। भारत एक ऐसे कोमल उतार चढ़ाव बिन्दु पर है जहां पर किसानों की सहायता के लिए इसे आय नीति हेतु अपने उपाय करने की आवश्यकता है न कि अधिक मूल्य प्राप्त करने के लिए लॉबी बनाने की जिससे कई कमियां उत्पन्न हो सकती हैं और जो किसानों को वास्तव में मिलेगा उससे अधिक उनको हानि हो जाएगी।

पिछले वर्ष हमने न्यूनतम समर्थन मूल्य को रोकने की सिफारिश की थी तो इसका विरोध हुआ और अंत में 5 प्रतिशत की वृद्धि करनी पड़ी। मूल्य तय करते समय किसानों और उपभोक्ताओं के मध्य बहुत ही कोमल संतुलन रखना होता है। सबसे बड़ा प्रश्न है कि किसानों की आय कम हो रही है और मैं किसान संस्थाओं से अनुरोध करता हूं कि वे इकट्ठे होकर केवल आय नीति बनाने पर बल दें। मूल्य नीति आपकी आय आजीविका का समाधान नहीं कर सकती। कृप्या दोनों के बीच के अन्तर को समझने का प्रयास करें। मूल्य नीति की प्रमुख भूमिका संसाधनों का आबंटन है और आय दूसरा उद्देश्य और जितना हम इसके बारे में ज्यादा जानेंगे उतना अधिक हम आय नीति की नवीन पद्धति अपनाने का प्रयास करेंगे और सिस्टम के लिए यह उतना ही बेहतर होगा जिससे न तो मण्ड़ियों, उत्पादन ढांचे तथा उत्पादन उत्कृष्टता में कोई गड़बड़ होगी।

किसान आय आयोग के लिए उत्तम समय।

श्री देवेन्द्र शर्मा – खाद्य नीति विश्लेषक और एक्टिविस्ट

एक पत्रकार के रूप में मैं एक बार नोरमन बोरलग से मिला, जिन्होंने मुझे लेच वेलसा, पोलैंड के एक नेता, की एक कहानी सुनाई जो पोलैंड में उस समय भाई–चारे आंदोलन की अगुवाई कर रहे थे। वे पूरे विश्व के समाचार पत्रों में छाए हुए थे क्योंकि उन्होंने श्रमिकों के अधिकार और उनके मुद्दों का प्रश्न उठाया था। नोबल पुरस्कार समिति ने बोरलग की अगुवाई में पोलैंड में एक छोटा दल भेजा यह पता लगाने के लिए क्या वलेसा नोबल पुरस्कार के पात्र हैं ? बोरलग वापस आए और रिपोर्ट दी कि वे यह देखकर डर गए थे कि वलेसा क्या कर रहे हैं। वे मजदूरों के लिए सस्ता भोजन देने की मांग कर रहे थे लेकिन उन लाखों लोगों की बात नहीं कर रहे थे जो अनाज का उत्पादन करते हैं। बोरलग ने अपनी रिपोर्ट में कहा कि वलेसा नोबल पुरस्कार के हकदार नहीं हैं। किन्तु वलेसा ने नोबल पुरस्कार तो जीता और मैं चाहता हूं कि वे आज जिंदा होते तो देखते कि भारत में कैसा वाद–विवाद चल रहा है। भारत भी चाहता है कि उसके किसानों का दमन हो क्योंकि वह उपभोक्ताओं को सस्ता अनाज उपलब्ध करना चाहता है और कृषि क्षेत्र को बाजार के अनुकूल बनाना चाहता है।

बाजार अनुकूल कृषि का क्या अर्थ है ? क्या जोखिम में मूल्य/बिकियां करने से बाजार कृषि अनुकूल बन जाता है ? मैं 2 प्रमुख मुद्दों का उत्तर देना चाहता हूं जिन्हें प्रत्येक

स्थान पर उठाया जाता है। पहला यह है कि न्यूनतम समर्थन मूल्य देने से पहल करना रूका, प्रोत्साहन और ठेकेदारी तथा इस प्रकार की अन्य कार्यों में रूकावट आई है। यदि न्यूनतम समर्थन मूल्य नहीं होता तो कई कारपोरेटस कृषि कारोबार में जुट जाते और कृषि कारोबार बढ़ता तथा किसानों को भी आश्चर्यजनक मूल्य मिलते तथा किसान जोखिम उठा सकते थे।

न्यूनतम समर्थन मूल्य का लाभ केवल भारत के 30 प्रतिशत किसानों को मिलता है और 70 प्रतिशत भाग न्यूनतम समर्थन मूल्य की पहुंच से अभी भी बाहर है। कोई भी सोच सकता है कि 70 प्रतिशत भाग कारपोरेटस के लिए अपना भाग्य आजमाने के लिए पर्याप्त होगा। इस 70 प्रतिशत भाग की स्थिति इतनी अच्छी है कि इसका प्रदर्शन देश में किया जा सकता है कि क्या बिना सरकारी सहायता के किसान जी सकते हैं या नहीं।

वास्तविकता यह है कि किसानों को बहुत कम राज्य सरकारें सहायता उपलब्ध कराती हैं क्योंकि किसान संकट में हैं, ये आत्महत्या कर रहे है और वे कृषि का धंधा छोड़ना चाहते हैं। जिस प्रकार भारत में कृषि को समझा जा रहा है ऐसा प्रतित होता है कि कुछ अत्यधिक गलत हो रहा है। देश को वृद्धि दर बढ़ाने की सनक छोड़नी होगी।

लोग इसके बारे में अक्सर सुनते रहते होंगे किन्तु यदि अमरीका के लिए यह सफल है तो अमरीका कृषि को इतनी बड़ी आर्थिक सहायता कैसे दे रहा है ? यदि आर्थिक सहायता वापस ले ली जाए तो अमरीका में कृषि क्षेत्र ठप्प हो जाएगा। यूरोप संघ में कृषि पर से आर्थिक सहायता वापस लेने पर कृषि क्षेत्र वहां भी समाप्त हो जाएगा। यूएनसीटीएडी द्वारा भारत के अध्ययन से पता चलता है कि अमरीका में ग्रीन बाक्स आर्थिक सहायता को वापस लेने से 42 प्रतिशत से 45 प्रतिशत के बीच कृषि क्षेत्र में कमी आ जाएगी।

उत्पादन की भारतीय लागत के बारे में कहा गया है कि विश्व बाजार में यदि भारतीय किसान को टिके रहना है तो उसे उत्पादकता बढ़ानी होगी। यह भी एक भ्रामक बहस है। चावल जो भारतीय उत्पादन में एक महत्वपूर्ण फसल है जिसका उत्पादन प्रति हैक्टेयर 3 टन या 2.8 टन के आसपास है। अमेरिका में यह 7 टन प्रति हैक्टेयर है। बहस का विषय यह है कि जब तक भारतीय किसान उत्पादकता 3 से 7 टन नहीं कर लेता तो वह टिक नहीं सकता। अंत में विश्व बाजार में उसके पास आत्महत्या करने के सिवाय अन्य कोई विकल्प नहीं होगा। अब अमेरिका के किसानों पर विचार करते हैं। क्या वह 7 टन प्रति हैक्टेयर पर बना रह सकता है ? मेरे अध्ययन के अनुसार वर्ष 2005 में अमेरिका का कुल चावल उत्पादन 1.2 बिलियन अमेरिकी डॉलर था। फिर भी किसानों को 1.2 बिलियन अमेरिकी डॉलर की फसल का उत्पादन करने पर 1.4 बिलियन अमेरिकी डॉलर मिले।

यह केवल चावल के लिए ही लागू नहीं है। कपास के लिए भी ऐसा ही है जो कि एक उत्कृष्ट उदाहरण है। वर्ष 2005 में मेरे द्वारा किए गए अध्ययन के अनुसार अमेरिका में

कपास उत्पादन का मूल्य 3.9 बिलियन अमेरिकी डॉलर था जिसका उत्पादन 20,000 कपास उत्पादकों ने किया था। विश्व में कपास उत्पादन का सबसे बड़ा भारत क्षेत्र है। हम सदा कहते हैं कि भारतीय किसान है और उन्हें अमेरिका के जितना ही उत्पादन बढ़ाने के पर्यास करने चाहिए। अमेरिका में 20,000 कपास उत्पादक 3.9 बिलियन अमेरिकी डॉलर का उत्पादन करते हैं और उन्हें इसके उत्पादन हेतु 4.7 बिलियन अमेरिकी डॉलर की आर्थिक सहायता मिलती है। भारतीय किसान भी उत्पादकता बढ़ा सकते हैं, किन्तु क्या उन्हें इतनी मात्रा में आर्थिक सहायता दी जाएगी ? नहीं। इसका अर्थ है कि या तो वे आत्महत्या करें या खेती छोड़ दें। कहानी का यह भाग अवर्जित रह जाता है।

देश में परिवर्तन की आवश्यकता है; न्यूनतम समर्थन मूल्य देने का युग खत्म हो रहा है और हमें अगली स्थिति के लिए तैयार रहना चाहिए जिससे किसानों को एक निश्चित आय मिलती रहे। इसके लिए किसानों की उत्पादकता, उनके भौगोलिक स्थान को देखना होगा जिस पर वे क्या उगाते हैं और इस क्षेत्र के लिए एक किसान आय आयोग की आवश्यकता भी है। यदि किसी गेटकीपर को 25000/– रू. मासिक मिलते हैं तो एक किसान को 2000/– रू. मासिक क्यों मिलें ?

सरकार कई घोषनाएं करती है और कारपोरेट क्षेत्र में भी सहयोग देती है लेकिन यह समस्या नहीं है। जैसे ही सरकार निर्धनों को कुछ देना चाहती है तो देश के अन्य लोगों की भौंहे तन जाती हैं और समाचार पत्रों में इसका प्रकाशन सुर्खियों में किया जाता है। वे छापते हैं कि खाद्य आर्थिक सहायता पर 1.25 लाख करोड़ रू. खर्च करने पर राजस्व घाटा होगा और यह देश तबाह हो जाएगा, ऐसा कहना मूर्खता है। कारपोरेट क्षेत्र को वर्ष 2004–05 से ही लगभग 32 लाख करोड़ रू. की दी गई कर छूट के संबंध में क्या कहना है ? पिछले केवल 2 वर्षों में 11 लाख करोड़ रू. कारपोरेट क्षेत्र को दिया जा चुका है। औद्योगिक क्षेत्र मंदा, निर्माण क्षेत्र मंदा, निर्यात कम हुआ है और बेरोजगारी बढ़ रही है। क्या इन पर किया गया सरकारी खर्च संसाधनों को व्यर्थ करना नहीं है ?

यदि 11 लाख करोड़ रू. भारतीय किसानों को दिए गए होते तो उनकी आय बढ़ती और जब किसानों की आय बढ़ती है तो पूरी अर्थव्यवस्था को लाभ मिलता है। कृषि क्षेत्र को पुनः सुधार करने की आवश्यकता है। सुधारों का अर्थ निजिकरण नहीं होना चाहिए। हमें सुधार आरम्भ करते समय यह सुनिश्चित करना चाहिए कि किसानों के कल्याण पर विशेष ध्यान दिया जाए। देश में इसी की आवश्यकता है। जब तक हम ये सुधार नहीं करते, तब तक हमें बीतने वाले प्रत्येक वर्ष में और आत्महत्याओं का समाचार सुनने के लिए तैयार रहना होगा।

O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O

RNI No. 831/1957
पोस्टल रजि० DL (S)-01/3092/2012-14
पहले भुगतान किये बिना पोस्ट करने का लाइसेंस नं० U(C)-92/2012-14

प्रकाशन की तिथि : 1 नवम्बर, 2013
नई दिल्ली पी.एस.ओ, नई दिल्ली–2,
तारीख 4 एवं 5, नवम्बर 2013

'विश्व खाद्य दिवस' – 16 अक्टूबर, 2013

विश्व खाद्य दिवस दिनाँक 16 अक्टूबर, 2013 को भूवनेश्वर, (उड़ीशा) में मनाया गया। इस अवसर पर किसान सम्मेलन का आयोजन किया गया। डॉ० त्रिलोचन महापात्र, निदेशक, सीआरआरआई, कटक, (उड़ीशा) ने एक रंगीन स्मारिका का उद्घाटन किया तथा सात व्यक्तियों को 'कृषक बंधु' पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

डॉ० पी.सी. मोहंती ने सम्मेलन की अध्यक्षता की तथा डॉ० महापात्र, मुख्य वक्ता थे। इनके अलावा श्री सहदेव साहू, पूर्व मुख्य सचिव, उड़ीशा सरकार, श्री शरत चन्द्र, प्रख्यात अर्थशास्त्री तथा चौधरी बिनित कुमार दास, डीजीएम, उड़ीशा राज्य सहकारी बैंक ने भी इस सम्मेलन में भाग लिया।

डॉ० मोहंती ने केन्द्र तथा राज्य सरकार से मांग की अधिक उत्पादन के लिऐ वह सभी कृषक विकास समितियों तथा बैंकों में निदेशक के रूप में किसानों के प्रतिनिधियों को अवश्य मनोनित करें।

सम्मेलन के प्रारंभ में दिवंगत आत्माओं जैसे की श्री डोलामणि साहू, श्री सोमनाथ रथ, पूर्व कृषि मंत्री, श्री रविन्द्र भूषण कानूंगो और श्री गगन चंद्र दास के लिऐ 1 मिनट की मौन प्रार्थना की गई।

O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O

भारत कृषक समाज ए–1, निजामुद्दीन वेस्ट, नई दिल्ली– 110013, फोन: 011–24359509, 65650384, ई–मेल: contact@bks.org.in, वैबसाईट: www.farmersforum.in के लिए श्री उरविन्द्र सिंह भाटिया द्वारा सम्पादित, मुद्रित व प्रकाशित तथा एवरेस्ट प्रेस, ई 49/8 ओखला इण्डस्ट्रीयल एरिया, फेस –2, नई दिल्ली –110020 द्वारा मुद्रित।